लक्षणा तेन षड्विधा

① मुख्यार्थबाधे तद्योगे रूढितोऽथ प्रयोजनात् ।
अन्योऽर्थो लक्ष्यते यत् सा लक्षणारोपिता क्रिया ॥

आचार्य मम्मट कहते हैं तीन हेतुओं से जो एक अन्य अर्थ लक्षित होता है, वह 'लक्षणा' नामक आरोपित व्यापार है। ये तीन हेतु हैं —

① मुख्यार्थबाध ② मुख्यार्थ योग ③ रूढि अथवा प्रयोजन

① **मुख्यार्थबाध** → मुख्यार्थ बाध को कुछ आचार्य 'अन्वयानुपपत्ति' मानते हैं अर्थात् जो शब्दों का वाच्यार्थ है वही अनुपपन्न हो जाये। किन्तु ऐसा मानने पर 'काकेभ्यो दधि रक्ष्यताम्' इत्यादि में लक्षणा न होगी, क्योंकि यहाँ अन्वयानुपपत्ति नहीं है। परन्तु यहाँ लक्षणा से "दध्युपघातक द्रव्यों से दधि की रक्षा करना" यह वक्ता को अभीष्ट है अतः मुख्यार्थ बाध से तात्पर्यानुपपत्ति अर्थ लेना ही अधिक सम्यक् है न कि अन्वयानुपपत्ति। अत एव नागेश परमलघुमञ्जूषा में लिखते हैं → 'तात्पर्यानुपपत्तिः लक्षणाबीजम्' ।

~~"मुख्यार्थबाधश्च शक्यतावच्छेदक रूपेण तात्पर्यविषयान्वयबाधः"~~ प्रमा

② **मुख्यार्थ योग** → शब्द से जिस अन्य (अमुख्य) अर्थ की प्रतीति होती है, उसका मुख्य अर्थ से सम्बन्ध होता है। इस मुख्यार्थ योग के 5 निमित्त इस प्रकार प्राचीन आलङ्कारिकों ने बताये हैं —

"अभिधेयेन सम्बन्धात् सादृश्यात् समवायतः।
वैपरीत्यात् क्रियायोगात् लक्षणा पञ्चधा मता॥"

③ **रूढितोऽथ प्रयोजनात्** → कहीं रूढि अर्थात् प्रसिद्धि के कारण शब्द से अमुख्य अर्थ की प्रतीति होती है और कहीं विशेष प्रयोजन को ध्यान में रखकर लाक्षणिक शब्दों का प्रयोग होता है। रूढि अथवा प्रयोजन लक्षणा का मुख्य हेतु है। इसी से लक्ष्यार्थ निर्धारित होता है अन्यथा मुख्यार्थ बाध और योग होने से 'गङ्गायां घोषः' घोष शब्द की भी लक्षणा हो जाए।

Scanned with CamScanner

ये तीनों समस्त रूप से (दण्डचक्रादिन्याय से) लक्षणा के हेतु होते हैं न कि व्यस्त रूप (तृणारणिमणिन्याय) से।

उदा॰ → कर्मणि कुशलः → मुख्यार्थबाध, दर्भग्रहणायोग:

सम्बन्ध → विवेचकत्वं (विवेचकत्वं च सतो ग्रहणमसतः परित्यागरूपं)

रूढिः वाला

प्रयोजने → गङ्गायां घोषः → मुख्यार्थबाधः → गङ्गादीनां घोषाद्याधारत्व असम्भवः

योगः → सामीप्य सम्बन्धेन गङ्गातटे घोषः

प्रयोजन → शीतत्वपावनत्वातिशयः

'गङ्गातटे घोषः' ये कहने से प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा अतः गङ्गादि शब्द मुख्य से अमुख्य अर्थ की प्रतीति कराते हैं यह शब्द व्यापार आरोपित है अर्थात् 'सान्तरार्थनिष्ठ' है

अन्तरं व्यवधानं तेन सह वर्तत इति सान्तरः (मुख्यार्थबाधाद्यपेक्षया) व्यवहितो योऽर्थः लक्ष्यरूपः तन्निष्ठः तद्विषयक (तद्बोधक इत्यर्थः)

बालबोधिनी

पुनः लक्षणा के दो भेद होते हैं —

स्वसिद्धये पराक्षेपः परार्थे स्वसमर्पणम्।
उपादानं लक्षणं चेत्युक्ता शुद्धैव सा द्विधा॥

उपादान लक्षणा → जहाँ वाच्यार्थ अपनी सिद्धि के लिये अन्यार्थ का उपादान (आक्षेप) कर लेता है।

कुन्ताः प्रविशन्ति इत्यादौ कुन्तादिभिरात्मनः प्रवेशसिद्ध्यर्थं स्वसंयोगिनः पुरुषा आक्षिप्यन्ते, तत उपादानेनेयं लक्षणा।

मीमांसक मण्डनमिश्र मुकुलभट्टादि 'गौरनुबन्ध्यः' इत्यादि में उपादान लक्षणा मानते हैं। वे कहते हैं — यहाँ श्रुति कथित 'गौ' का अनुबन्धन नहीं हो (क्योंकि गौ जाति अनित्य है अनित्य का आलम्भन असम्भव है) (~~क्योंकि मीमांसक शक्तग्रह जाति में मानते हैं~~) इस प्रकार जाति व्यक्ति को अपनी सिद्धि के लिए आक्षिप्त करती है। क्योंकि 'विशेष्यं नाभिधा गच्छेत् क्षीणशक्तिर्विशेषणे' इसका आचार्य मम्मट उत्तर देते हैं —

'न ह्यत्र प्रयोजनमस्ति, न वा रूढिरियम्। व्यक्त्यविनाभावित्वात्तु जात्या व्यक्तिराक्षिप्यते यथा क्रियतामित्यत्र कर्ता, कुर्वित्यत्र कर्म प्रविश पिण्डीमित्यादौ गृहं भक्षयेत्यादि च।'

लक्षण लक्षणा → '~~गङ्गायां घोषः~~' जहाँ भिन्नार्थ की सिद्धि के लिए वाच्यार्थ अपने को अत्यन्त त्याग दे। जैसे गङ्गायां घोषः यहाँ तट पर घोष की सिद्धि के लिए गङ्गा शब्द अपने अर्थ को तट के प्रति अर्पित कर देता है।

उपादान और लक्षण लक्षणा ~~का~~ उपचार के अभिप्राय से शुद्धा कहलाती है। उपलक्षणा →

उपचार → 'उपचारो हि नामात्यन्तं विशकलितयोः शब्दयोः सादृश्यातिशयमहिम्ना भेदप्रतीतिस्थगनमात्रम्' साहित्यदर्पण :2

इस प्रकार आचार्य मम्मट उपचार के मिश्रण और अमिश्रण को गौणी और शुद्धा का हेतु मानते हैं। किन्तु मुकुलभट्ट कहते हैं – शुद्धा के इन दोनों रूपों में लक्ष्य और लक्षक (वाच्य) को भेद रूप तारस्थ्य रहता है, अर्थात् शुद्धा लक्षणा में मुख्यार्थ और लक्ष्यार्थ का भेद प्रतीत होता है। यही भेद-प्रतीति रूप तारस्थ्य है, जिसे उदासीनता या औदासीन्य भी कहते हैं, और यह उदासीनता ही शुद्धा लक्षणा का गौणी से भेदक है। इस प्रकार मुकुलभट्टमत में 'गङ्गायां घोषः' आदि में गङ्गा तथा तट का परस्पर भेद बना रहता है दोनों भिन्न-2 प्रतीत होते हैं ~~किन्तु~~ इस भेद प्रतीति को ही तारस्थ्य कहते हैं।

आचार्य मम्मट उत्तर देते हैं; कि 'गङ्गायां घोषः' इस शुद्धा लक्षणा के मुख्यार्थ और लक्ष्यार्थ में भेद रूप तारस्थ्य नहीं अपितु गङ्गा को तट से अभेद प्रतीत होता है अर्थात् तट की गङ्गात्व के रूप में प्रतीति होती है तभी शीतत्व, पावनत्वादि की तट में प्रतीति होती है। यह शीतत्वादि प्रतीति ही लक्षणा का प्रयोजन है। अभेद प्रतीति न होती तो लक्ष्यार्थ और मुख्यार्थ का सामीप्य सम्बन्ध ही रहता तब इस लक्षणा के प्रयोग में कोई विशेषता न रहती फिर तो 'गङ्गातटे घोषः' और 'गङ्गायां घोषः' इन दोनों प्रयोग में कोई भेद नहीं होगा।

पुनः लक्षणा के अवान्तर भेद करते हैं→

'सारोपाऽन्या तु यत्रोक्तौ विषयी विषयस्तथा।'

जहाँ आरोप्यमाण (गौ आदि) और आरोपविषय (बाहीकादि) दोनों अपने-2 रूप में एक ही अधिकरण में रहें, वहाँ सारोपा लक्षणा होती है।

"विषय्यन्तः कृतेऽन्यस्मिन् सा स्यात्साध्यवसानिका।"

जहाँ आरोप्यमाण (गौआदि) के द्वारा आरोपविषय (बाहीकआदि) के निगीर्ण किये जाने पर साध्यवसाना लक्षणा होती है।

सारोपा → 'गौर्बाहीकः' आचार्य मम्मट के अनुसार यहाँ उपचार का मिश्रण होने से गौणी और विषय और विषयी स्वतन्त्रोक्त होने से सारोपा है।

साध्यवसाना → 'गौरयम्' यहाँ सादृश्य की महिमा दिखाने हेतु विषयी ने विषय को निगीर्ण कर लिया है।

कुमारिलभट्ट प्रभृति मीमांसक गौणी को अलग वृत्ति मानते हैं:-

— 'अभिधेयाविनाभूत प्रतीतिर्लक्षणोच्यते।

लक्ष्यमाणगुणैर्योगाद् ~~वृत्ति~~ वृत्तेरिष्टा तु गौणता।"

किन्तु ~~आल~~ ~~ध्वनिवादी आलंकारिक~~

मम्मट गौणी वृत्ति को लक्षणा में अन्तर्भूत कर लेते हैं।

पुनः → "भेदाविमौ च सादृश्यात्सम्बन्धान्तरतस्तथा"

गौणौ शुद्धौ च विज्ञेयौ —

सारोपा और साध्यवसाना गौणी और शुद्धा भेद से दो-दो प्रकार की होगी। गौणी का हेतु सादृश्य सम्बन्ध और शुद्धा का हेतु वाच्य लक्ष्य में सादृश्येतर सम्बन्ध है।

उदा॰ → सारोपा → 'गौर्बाहीकः' यहाँ लक्षणा मानने में आचार्यों में मतभेद,

① प्रथम मत → गो सहचारी जाड्यमान्द्यादि गुण लक्षित होकर भी गोशब्द के 'बाहीक' परार्थ के अभिधान (अभिधागम्य) होने के लिए प्रवृत्ति निमित्त हो जाते हैं। कि परार्थ का अभिधान

② गोत्व में रहने वाले गुणों के अभेद से परार्थगत गुण ही लक्षित होते हैं।

③ गौ और बाहीक में रहने वाले गुणों (जाड्यादि) का आश्रय होने के कारण परार्थ अर्थात बाहीक अर्थ लक्षित होता है - यह आचार्य मम्मट को अभिमत है।

Scanned with CamScanner

शुद्धा → सारोपा → आयुर्घृतम्
साध्यवसाना → आयुरेवेदम्

— कार्यकारणभावसम्बन्धः
अन्यवैलक्षण्येनाव्यभिचारेण च
कार्यकारणत्वादि प्रयोजनम्।

इस प्रकार से लक्षणा छः प्रकार की होती है।

'लक्षणा तेन षड्विधा'

लक्षणा
- शुद्धा
  - उपादान
  - लक्षण
  - ~~शुद्धा~~ सारोपा
  - ~~गौणी~~ साध्यवसाना
- गौणी
  - सारोपा
  - साध्यवसाना

'व्यङ्ग्येन रहिता रूढौ सहिता तु प्रयोजने'
प्रयोजनं हि व्यञ्जनव्यापारगम्यमेव।

'तच्च गूढमगूढं वा' तच्चेति व्यङ्ग्यम्।

एवं लक्षणायाः त्रयोदश भेदाः

लक्षणा
- रूढि (अव्यङ्ग्या)
- प्रयोजनवती
  - उपर्युक्त 6 भेद
    - गूढव्यङ्ग्या (मुखं विकसितस्मितं)
    - अगूढव्यङ्ग्या (श्रीपरिचयाज्जडा)

Scanned with CamScanner